अमावस्या

—शशोवन

दूर क्षितिज में जब कोसानी की पहाड़ियों की ढलान से उतरते हुये सूर्य की अंतिम रश्मियों ने भी अपनी सांस तोड़ दी तो बॉल्डर की पीठ से न जाने कब से अपनी पीठ टिकाये हुये मेरा भी शरीर दुखने सा लगा था। अपने मित्रों की ऊल जुलूल बातों से बचने के ख्याल से और उनसे दृष्टि चुराकर मैं चुपचाप ढलते हुये सूर्य की अंतिम यात्रा के धीरे

धीरे करके लुप्त होते हुये रंगों को देखने यहां आ गया हूा। यूं भी कोसानी के पहाड़ों की सुन्दरता और यहां के पहाड़ी वातावरण की प्यार से गुदगुदाती मदमस्त हवाओं का कहना ही क्या है। शब्दों की कमी हो जाती है, यहां के खुबसूरत इलाकों और गगन चूमते पहाड़ों की सुन्दरता का वर्णन करने के लिये। जहां तक अपने मित्रों से दूर रहने और उनसे बचने और दूर बने रहने की जो मेरी आदत थी उसका मुख्य कारण उनकी आदतों और बातों में मैं कोई समायोजन नहीं कर पाता था। मैं था एक निहायत ही ख़ामोश, चुप और सदा गंभीर प्रवृत्ति का ऐसा युवक जो कि सदैव अपने ही ख्यालों में भटकने का आदी हो चुका था। एक ओर जहां मुझको सूनी सड़कें और वीरान इलाके पसंद आते थे वहीं मेरे मित्रों को भीड़ और उत्सवों में तसल्ली मिला करती थी। अकेले भटकने और दूर कहीं भी किसी भी उद्देश्य के बगैर बेमतलब अनजाने सूने पथ पर चल देना जैसे मेरी ज़िन्दगी की खुशियों का एक अंग बन चुका ाा। जब कभी भी मैं अपनी इन अनोखी और अनूठी हॉबियों के बारे में अपने मित्रों से जिक्र कर देता था तो जाहिर था कि वे सब मुझ पर हंसते थे। मेरी इन्हीं आदतों के कारण मेरे मित्रों ने मुझको 'गंगाराम' और 'कालिदास' जैसी तमाम उपलब्धियों से सुशोभित किया हुआ था। जहां तक रही मेरी अनजानी राहों पर भटकने की आदत तो जब मैं भारत में था तो कभी पैदल जहां मुंह उठा उधर ही चल दिया, या फिर सायकिल उठाई और चल दिया, कहां और किस तरफ, कुछ नहीं मालुम होता था। आज जब विदेश में हूं तो वही आदत कार ने ले रखी है। जब भी अवकाश मिला और चल दिया कार

को चालू करके। कहां गया, क्यों गया, जब वापस आया और जबाब तलब हुआ तो पता चला कि सिवा इसके कि एक अपराधबोध की भावना से चुप बने रहो, कोई अन्य जरिया बचने का दिखाई नहीं देता है।

हां, तो बात आरंभ की धी कोसानी के सुन्दर पहाड़ी दृश्यों को देखते रहने की। बात सन् **1973** की उस समय की है जब कि मुझे अपने कॉलेज की तरफ से कोसानी, अल्मोड़ा, नैनीताल, बागेश्वर और भुवाली आदि पहाड़ी क्षेत्रों का भ्रमण करने का अवसर मिला धा। अपने मित्रों के पूरे समूह के साध मैं अल्मोड़ा आया धा। अल्मोड़ा कॉलेज में ही हमारे रहने, खाने और ठहरने का प्रबंध किया गया धा। हांलाकि ये यात्रा कॉलेज की तरफ से आयोजित की गई थी और बहुत सारे सेवा के काम हमको अपनी इस यात्रा के दौरान पूरे करने थे। अल्मोड़ा कालेज में हमको अपने श्रमदान के द्वारा एक सड़क का निर्माण करना था। कोसानी हमारे भ्रमण और पहाड़ी सौन्दर्य को देखने के लिये था, भुवाली के सेनीटोरियम में हमको क्षय के मरीजों की सेवा करनी थी और नैनीताल की सुप्रसिद्ध झील में तल्लीताल से लेकर मल्लीताल तक नौकायान द्वारा पैसा कमाकर वहां के गरीब तबकों में बांट देना था।

अभी मैं बॉल्डर की पीठ से अपनी पीठ टिकाये हुये अपने विचारों में गुम ही था कि तभी अचानक से मुझको अपने आस पास कुछ लोगों के बातें करने की आवाज़ें सुनाई देने लगी। मैंने एक शंका से अपने चारों तरफ टटोलने की कोशिश की तो मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। मेरे सारे दोस्त मुझको खोजते हुये लगभग मेरे पास ही आ चुके

थे। उन्हें देखकर मैंने चुपचाप अपने हथियार डाल दिये। जाहिर था कि उनसे बचने की एक असफल कोशिश करना मेरी अपनी ही मूर्खता हो सकती थी। फिर उन सबसे बचकर अब मैं जा भी कहां सकता था। मैं चुपचाप उठकर खड़ा हुआ ही था कि तब तक मेरे समस्त मित्रों ने आकर मुझे घेर लिया। घेरते ही मुझ पर प्रश्नों की बौछार सी पड़ने लगी। ' क्या किया जाये इसके साथ?', बहुत कटता है ये हम सब से, 'लड़कियों से तो ऐसा कतराता है कि जैसे सब ही इसको काटने दौड़ती हैं, अब देखो, हम सबकी कोई न कोई है, मगर एक ये है कि अभी तक बिल्कुल छूंछा है'। तब ही एक ने सुझाव दिया। वह थोड़ा सा गंभीर होकर बोला कि, 'इसे हस्पताल ले चलो और इसकी डाक्टरी करवाओ। सारी असलियत सामने आ जायेगी। ' इस प्रकार से सब अपनी अपनी कहने में लगे हुये थे। मेरी याचना को कौन सुननेवाला था वहां। मैं बस चुप ही बना रहा था। फिर सबकी सर्वसम्मत्ति से मेरे बारे में ये निर्णय लिया गया कि अभी तो चलो और रात में बैठकर आराम से फैसला करेंगे कि इसके लिये क्या किया जाये। तब सबके साथ मैं भी चुपचाप चल दिया। मन ही मन मुझको एक भय भी सताने लगा था कि न जाने कैसा निर्णय मेरे बारे में लिया जायेगा?

किसी प्रकार से पहाड़ी बर्फीली हवाओं से जूझती ठंडी रात काटी। मैं बेबस था। सोचा क्षमा मांग लूं। एक बार कोशिश भी की मगर मित्रों की वही मांग थी कि मेरी भी उनके समान कोई लड़की मित्र होनी चाहिये। नहीं है तो मुझको ढूंढ़ना है। मेरी लड़की मित्र होगी तभी मैं उनके समूह में बाकायदा सम्मिलित रह सकता हूं। मैं उनसे अलग थलग

रहूं। अपनी दुनियां में, मैं यूं ही अकेला विचरता रहूं, मेरी इस आदत को उनको बिल्कुल भी गवारा नहीं था। वे चाहते हो कि मैं भी उन सबके समान उनके मध्य ही रहूं, उनके साथ घूंमू और फिरूं, जैसा वे सब करते हैं, वही सब मैं भी किया करूं। सबसे बड़ी बात जो वे सब चाहते हो, वह यही कि मेरी भी उन सबके समान कोई न कोई लड़की मित्र अवश्य ही होना चाहिये। यदि नहीं है तो मुझको ढूंढ़नी है। हां, ये और बात थी कि मेरे इस जटिल काम में वे सबके सब मेरी हर तरह से सहायता करने को तैयार थे। पैसे से, हाथ पैरों से, प्रेम पत्रों आदि के वितरण इत्यादि में सब ही ने मुझको अपना पूरा विश्वास और आश्वासन दे दिया था। इस प्रकार से मेरे सब ही मित्रों की समिति लगभग रात के दो बजे तक बैठी रही। मेरी समस्या पर विचार होता रहा। सलाह मशवरे होते रहे। हरेक के अपने अपने विचार और सुझाव धे। उनके इन सुझावों की अति यहां तक पहुंच रही धी कि यदि मैं अपने इस कार्य में असफल रहा तो वे सब मुझको नाचने वालियों और वेश्याओं के दरवाजे पर लाकर खड़ा कर सकते हैं। 'बीच के लोगों' के समूह में ले जाकर छोड़ देंगे। यदि कुछ नहीं कर सके तो मुझ पर कोई भी बड़े से बड़ा आर्थिक जुर्माना कर देंगे। तब अंत में जाकर ठंडी रात के लगभग तीन बजे ये निर्णय लिया गया कि कोसानी के लड़कियों के कॉलेज में कल शाम को उनका कोई नाटक होनेवाला था। पर्वती क्षेत्रों में इस प्रकार सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रायः होते रहना कोई भी नई बात नहीं धी। आर्थिक सहायता और अतिरिक्त धन जमा करने के उद्देश्य से ऐसे कार्यक्रम यहां होते ही रहते धे। पहाड़ी नृत्य,

वेशभूषा, यहां का भोजन आदि तथा अन्य सामाजिक बातों के द्वारा सीधे और मेहनती पर्वतीय गरीब लोग बाहर से आये हुये पर्यटकों का मनोरंजन तो करते ही थे, साथ ही ये उनका धन कमाने का एक सुन्दर उपाय भी धा। हांलाकि हम बाहर के लोग थे और पर्वतीय इलाकों पर घूमने के ध्येय से आये हुये थे, मगर फिर भी हम सबको निमंत्रण दिया गया था। लेकिन शर्त केवल इतनी ही भर थी कि हम सबको उनका कार्यक्रम देखने के लिये बाकायदा टिकट लेनी थी। टिकट का मूल्य उस समय तीसरे दर्जे का जो सबसे पीछे की सीटें होती थीं, पांच रूपये रखा गया था। पांच रूपये का मूल्य उस समय आज के हिसाब से पांच हजार रूपये होता होगा। तब पहाड़ों पर उस समय केवल **35** पैसे की भोजन की एक पूरी थाली मिला करती थी। इस भोजन की थाली में तब चार चपातियां, एक बड़ी कटोरी चावल, एक दाल, एक सब्जी, अचार, दही, चटनी तथा ठंडा पानी होता ह्या। इतना भोजन एक औसत दर्जे के मनुष्य के लिये काफी होता था। अब खुद ही निर्णय लीजिये कि जब ऐसा था तो पांच रूपयों का कितना बड़ा मूल्य हो सकता था। पांच रूपये की टिकट लेकर एक नाटक देखना हम सबके लिये एक बड़ा खर्च, और वह भी अपने घर से काफी दूर ठंडी बर्फीली पहाड़ियों के क्षेत्र में? हमारे जेब खर्च के हिसाब से एक बड़ा महत्व रखता था। इस कारण हम सबने वहां जाने का इरादा छोड़ रखा था। मेरे लिये जो निर्णय लिया गया था, उसमें मुझे लड़कियों के इसी कालेज के गेट के सामने जाकर खड़ा होना था, और जो भी लड़की नाटक समाप्त होने के बाद कुछ भी खाती हुई निकलेगी, उसी से मुझे जाकर बात करनी थी। मुझे

क्या बात करनी है और क्या कहना है, ये तो मुझे बता दिया गया था, पर मेरे इस तरह से किसी अनजान लड़की से बात करने और वह भी दूसरे अपरिचित क्षेत्र की भूमि पर, इन सब बातों और परिणामों का हश्र मुझ पर छोड़ दिया गया था। यदि मैं ऐसा करने के लिये मना कर देता तो जुर्माना भरने के तौर पर मुझको अपने सब ही साथियों को तब तक किसी अच्छे रेस्तरां में खाना खिलाना था, जब तक कि हम सब इस पर्वतीय इलाकों की यात्रा भ्रमण समाप्त करके अपने अपने घर नहीं लौट जाते।

फिर रात बीत गई। मेरा किसी प्रकार से इसी चिन्ता और सोच में दिन निकला। सूर्य की रश्मियों ने पर्वतों पर जगह जगह चिपकी हुई शबनम की बूंदों को बहुत प्यार से चूमकर नमस्कार किया। गगन चुम्बी चीड़ और चिनारों पर से रात भर के बैठे पक्षी अपने पंख फड़फड़ाकर उड़ गये। पहाड़ों के शीर्शों पर चिपकी हुई बर्फ सूर्य की गर्मी पाकर पिघलने लगी। फिर धीरे धीरे लोगों की कार्यव्यस्तता आरंभ हुई और दिन साफ हो गया। आकाश पर आज बादलों का कोई भी काफिला शरण नहीं लिये हुये था, इसलिये दिन और दिनों से बेहतर था।

संध्या हुई और फिर मुझे कोसानी के कन्या विद्यालय के सामने मेरे दोस्तों ने छः बजे ही ले जाकर खड़ा होने के लिये बाध्य कर दिया। नाटक सात बजे आरंभ होने को था, लेकिन साढ़े सात बजे आरंभ हुआ। मेरे सब ही दोस्त एक अजीब ही उत्सुकता में मुझसे लगभग सौ गज के फासले पर सड़क के किनारे लगी पत्थरों की मुंडेर पर बैठे हुये मेरी निगरानी कर रहे थे। निगरानी इसलिये कि कहीं मैं अपना

विचार बदलकर उनसे आंख चुराकर भाग न जाऊं। मैं इसी दुविधा में अभी तक अपने स्थान पर खड़ा हुआ था। कहीं भी वहां पर बैठने के लिये जगह नहीं थी। मेरे समान कई अन्य लोग भी वहां पर चहल कदमी कर रहे थे। मेरे ख्याल से वे सब नाटक में आये हुये लोगों को वापस ले जाने के लिये आये थे। पर मेरी दुविधा को कोई भी नहीं जानता था। वे सब भी मुझे अपने ही समान समझ रहे थे।

तब समय और बीता। पहाड़ों पर इठलाता हुआ चन्द्रमा चिनारों के पीछे से झांकने लगा था। दूर दूर तक पहाड़ों की घाटियों में, उनकी चोटियों पर, ढलानों पर चमकते हुये दीपों का प्रकाश इस बात की पुष्टि कर रहा था कि वहां पर रहने वालों के मकान हैं। मैं खड़े खड़े थकने लगा था। पैर भी दुखने लगे थे। तभी कालेज का बड़ा गेट अचानक ही खोल दिया गया। मैंने कलाई पर बंधी हुई घड़ी में समय देखा, नौ बजकर पैंतालीस मिनट हो चुके थे। कालेज के गेट से दर्शकों की भीड़ निकलने लगी थी। मगर कोई भी लड़की मुझे कुछ भी खाती हुई नहीं दिखाई दी। मैं मन में यही मना रहा था कि कोई भी लड़की कुछ भी खाती हुई न निकले तो मैं अपने आपको धन्य कहूंगा।

फिर धीरे धीरे निकलनेवालों की भीड़ भी कम हो गई। बड़ा गेट बंद करके उसमें लगी छोटी खिड़की खोल दी गई थी। अब कुछेक लोग ही कभी कभी उस खिड़की में से निकलते थे। निकलने वालों में ज्यादातर महिलायें और युवा लड़कियां ही थीं। कुछेक पल और बीते होंगे कि निकलनेवालों का अचानक ऐसा लगा कि जैसे निकलना बंद

हो चुका है।मैंने सोचा कि अब कोई भी अंदर नहीं होगा।अब तक मेरे आस पास के चहलकदमी करने वाले लोग अपने अपने लोगों को लेकर जा चुके थे।अब केवल मैं ही अकेला खड़ा हुआ था।तब मैंने अपने मित्रों की ओर देखा और इशारे से कहना चाहा कि अब कोई नहीं निकलेगा और मेरा यहां खड़े रहना बेकार है, मगर उन सबने मुझको अपने स्थान पर ही खड़े रहने का आदेश दे दिया।उनका इतना इशारा करना भर था कि तभी अचानक से बड़े गेट में लगी खिड़की का द्वार खुला और उसमें से एक लड़की अपने सिर तथा बालों को बचाती हुई झुककर बाहर निकली।मैं खड़ा खड़ा यही मना रहा था कि ये लड़की भी कुछ खाती हुई न निकले तो कितना अच्छा हो।मैं इस मुसीबत से छुटकारा पा लूं।मगर मैं ये देखकर आश्चर्य से गड़ गया कि उस लड़की के हाथ में एक पूरी कागज की थैली थी, जिसमें कुछ तो खाने का होगा ही, ये मेरा अनुमान था।बाद में मेरी रही बची उम्मीद भी जाती रही, ये देखकर जब कि उस लड़की ने अपने पर्स को कंधे से लटकाते हुये अपने हाथ में पकड़ी हुई कागज की थैली में कुछ निकालकर खाया।ये सब देखकर मैंने बेबस होकर अपने मित्रों की तरफ देखा।देखा तो उन्होंने वहीं से मुझे उस लड़की के पास जाने का आदेश दे दिया।

बाद में मुझे उस लड़की के करीब जाना पड़ा।मैं उसके पास गया और धीरे से कहा कि,

"जी, सुनिये।"

" ?? "

मेरी बात को सुनकर वह लड़की अपनी जगह पर खड़ी हो गई और जब उसने प्रश्नसूचक दृष्टि से मुझे अपना सिर उठाकर निहारा तो मैं उसका चेहरा देखकर हताश ही नहीं बल्कि दंग रह गया। देखने में वह लड़की निहायत ही काली तो क्या इतनी अधिक कुरूप थी कि मैं सोचता हूं कि संसार में उससे अथिक कोई अन्य लड़की कुरूप नहीं हो सकती थी। उसकी शक्ल, चेहरे की बनावट, रंग, दांतों की बनावट के हिसाब से उसने कुरूपता की समस्त सीमायें लांघ ली होंगी। मैं उसको देखकर अपने मन में दोहाई देने लगा कि ' हे, मेरे ईश्वर क्या यही मेरे नसीब में रह गई थी, जिसे मुझे अपने मित्रों के आदेश पर ये कहना है कि, 'आई लव यू'।

मैं अभी ऐसा सोच ही रहा था कि तभी उस लड़की ने मुझे टोक दिया। बोली,

" ऐ बाबू, आपने मुझे रोका हुआ है।"

" हां, रोका तो है।" मेरे मुख से अनायास ही निकल गया।

" कहिये, क्या काम आ पड़ा है मुझसे।" उसने कहा तो मैंने साहस जुटाया और उससे मॉफी के अंदाज में कहा कि,

" उधर देखिये, वे सब मेरे मित्र बैठे हुये हैं। उनका आदेश है कि मैं आपके दोनों हाथ पकड़कर ये कहूं कि....."

" क्या कहना है....."

" यही कि ' आई लव यू। साथ में आपका उत्तर भी, जो आप कहेंगी, मुझे उन्हें बताना होगा।"

" बड़ी अच्छी बात सिखाई है आपके मित्रों ने। मगर क्यों।"

" इसलिये कि उन सबके पास कोई न कोई प्रेमिका अवश्य ही है, और मैं इस बात से बहुत दूर हूं। यदि नहीं कहूंगा तो मुझे जब तक मैं यहां पर हूं उन सबको प्रति दिन खाना

खिलाना होगा, और इस तरह से मैं बिल्कुल ही कंगाल हो जाऊंगा।"

" लगता है कि बहुत सीधे हैं आप। दुनियादारी जैसी चीज नहीं सीखी है आपने अभी तक। लेकिन जो आपके मित्रों ने आदेश दिया है, वह सब कह सकेंगे आप मुझसे। मेरी शक्ल तो देखिये। 'अमावस्या' नाम जरूर है मेरा, मगर मैं तो उससे भी ज्यादा काली और बदसूरत हूं। फिर यहां पहाड़ों पर किसी भी लड़की का हाथ पकड़कर ऐसी बात कहना कोई भी मज़ाक नहीं होता है। निभा सकेंगे आप ये सब कहने के बाद ?"

" अब निभाना तो होगा ही। क्या पता, ऊपरवाले ने कैसा जीवनसाथी मेरे नसीब में लिखा है। यूं भी खुबसूरती तो मन में होती है, चेहरे की बदसूरती से क्या अंतर पड़ता है।" जाने कैसे मैंने उससे कह तो दिया था। शायद इस के पीछे मेरी वह मजबूरी थी कि जिसके कारण मैं अपने दोस्तों से बचना चाहता था। सो मैंने ऐसा कहा तो वह अचानक ही खिलखिलाकर हंस पड़ी। इस प्रकार कि उसके काले बदसूरत चेहरे पर चमकते हुये सफेद दांत ऐसे लगे कि जैसे काले बादलों में कहीं से सफेद मोती चमकने लगे हों।

" चलिये, मैं आपको अपनी भूमि और अपने देश में कंगाल नहीं होने दूंगी। लीजिये कहिये, जो कहना है आपको।" ये कहकर अमावस्या ने अपने दोनों हाथ आगे बढ़ाये तो मैं उसके दोनों हाथों में सफेद रंग के दस्ताने देखकर चौंक गया।

"चौंकिये मत मेरे दस्ताने देखकर। मुझे गठियाबाई की शिकायत है, इसी कारण मैं इन्हें पहना करती हूं।"

उसके इतना बताने पर मैं और भी सोचने पर मजबूर हो गया कि काली और बदसूरत तो है ही, अब गठियाबाई जैसी लाइलाज बीमारी भी है इसको। पता नहीं, और भी न जाने कितनी ही कमियां होंगीं, इसके अंदर। अब जो भी होगा देखा जायेगा, ऐसा सोचते हुये मैंने मन में ही अपने आपको अपने परमेश्वर के हवाले किया और उसके दोनों हाथ पकड़ते हुये उसकी आड़ी तिरछी आंखों में झांकते हुये उससे कहा कि,

" अमावस्या, आई लव यू।"

" रीयली ?" अचानक ही अमावस्या ने मेरी आंखों में देखते हुये मुझसे पूछा तो मैंने झेंपते हुये हां में अपना सिर हिला दिया। तब वह काफी देर तक मेरे दोनों हाथ अपने हाथों में पकड़े रही। फिर सहसा ही बोली,

" मैंने तो अपना नाम तुम्हें बता दिया है, अब तुम्हारा नाम पूछ सकती हूं।" इतना शीघ्र ही वह आपस की दूरियां मिटाकर 'आप' से 'तुम' पर आ गई।

" शरोवन।"

' शरोवन..' मेरा नाम लेकर वह मन में ही दोहराई। फिर जैसे कुछ सोचते हुये बोली,

" लगता है कि, ये नाम मैंने कहीं पढ़ा है।"

" कहां पढ़ा होगा। एक अकेला नाम है। कैसे मिल सकता है। मेरा तो डुप्लीकेट भी मुझे नहीं दिखाई दिया है आज तक।"

" तुम बुद्धुओं का डुप्लीकेट तो मिलने का प्रश्न ही नहीं होता है, हां, नाम यदि एक सा मिल जाये तो कह भी सकते हैं।"

यह कहकर वह फिर से खिलखिलाकर बड़े जोरों से हंसी तो मुझे ये समझते देर नहीं लगी कि ये लड़की देखने में बेहद कुरूप अवश्य है लेकिन जीवन के क्षेत्र में कहीं भी असफल नहीं होगी।''

वह अभी तक मेरे दोनों हाथ पकड़े हुये थी।मैं सोच रहा था कि वह पहले छोड़े तो मैं उसके हाथ छोड़ूं। यदि मैंने उसके हाथ अपनी तरफ से पहले छोड़ दिये तो ये तो मुंहफट है ही, कुछ भी कहने से नहीं चूकेगी। यह सोचते हुये मैं चुप ही रहा तो अमावस्या ने मेरी तरफ देखते हुये मुझसे कहा कि '' अब क्या सोच रहे हैं ?''

'' आपका जबाब, जो मुझे अपने दोस्तों को बताना है।''

'' चलिये, उन्हीं के पास चलते हैं।वहीं सबके बीच बता दूंगी।'' ये कहते हुये वह मेरा हाथ थामे हुये उस तरफ चल दी जहां पर कि मेरे सारे मित्र बैठे हुये इस सारे नज़ारे को देख रहे थे।उनके पास पहुंचते ही वह उन सबके बीच रूककर बोली,

''इन शरोवन जी ने जो कुछ मुझसे कहा है उसका उत्तर मैं कल पांच बजे इसी स्थान पर आकर दूंगी।आप सब कल मेरा यही पर इंतजार करियेगा।और हां, इनको अब आप लोग हैरान मत करियेगा।आपकी शर्त पूरी हो गई और बात भी पूरी हो गई।अब आगे आगे देखियेगा कि और क्या होता है।''

अपनी बात समाप्त होते ही अमावस्या ने अपने हाथ में पकड़ी हुई खाने की थैली को मुझे पकड़ाया और फिर सबको नमस्ते करके सामने ही सड़क से नीचे ढलान पर उतरती हुई किसी पहाड़ी पगडंडी पर आगे तक चली गई

और फिर क्षण मात्र में लुप्त भी हो गई। मैं और मेरे सब ही साथी एक कौतहूल के साथ इस समस्त नज़ारे को मूक बने देखते रह गये।

जितना कौतहूल इस पहली घटना और अमावस्या से भेंट का था उससे कहीं अधिक छटपटाहट सी मेरे साथ मेरे मित्रों को दूसरे दिन की शाम के आने की थी। ऐसी दशा में सोने का प्रश्न तो था ही नहीं। सारी रात हम सब चाय ही पीते रहे और कुछ न कुछ खाते रहे। इसी विषय पर वार्ता होती रही। कब चांद निकला और छिप भी गया, हमें कुछ पता ही नहीं चला। सुबह हुई तो दरख्तों पर रात भर के सोये हुये पक्षी कब उड़ गये किसी को थ्यान ही नहीं रहा। सबके सब काफी देर में सोकर उठे। इतना अच्छा भर था कि दूसरा दिन रविवार का आा सो हम सबको भी कुछ नहीं करना था। एक प्रकार से हमारा भी अवकाश का दिन था। दूसरे दिन कुछ भी अन्यत्र किये बगैर मेरा पूरा आवारा सा समूह समय से पहले ही अमावस्या के बताये हुये निर्धारित स्थान पर पहुंच गया। हम सबके मन में एक जिज्ञासा थी। कौतहूल था। साथ ही मन के किसी कोने में दुबका हुआ एक अजीब सा भय भी था। भय इस कारण था कि एक अनजान और अपरिचित से इलाके में किसी बाला से ऐसा कहना, और वह भी पूर्व निर्धारत योजना के अनुसार, सामाजिक और कानूनन दोनों ही तरीके से अपराध था। इस अपराध की हम सबको कोई भी सजा मिल सकती थी। जेल में जाने का अंदेशा हो चला था। किसी भी तरह से हम पर मार भी पड़ सकती थी। इन्हीं ख्यालों और सोचा विचारी में कब साढ़े पांच बज

गये हम में से किसी को पता ही नहीं चल सका। ध्यान तब आया जब कि हमारे एक संजीदा मित्र ने ये कहा कि,
"छः बजने वाला है। वह नहीं आयेगी। देखो एक अकेली लड़की कितनी अच्छी तरह से हमारे नौ लड़कों के समूह को मूर्ख बना गई।"

उसकी कही हुई बात पर हमको तब विश्वास आने लगा जब कि शाम के छः बज के बीस मिनट हो चुके थे। हम सब अभी तक उस काली बदसूरत लड़की को एक मृत आशा से इधर उधर ताक लेते थे। फिर जब हमको ये विश्वास हो चला कि वह अब सचमुच नहीं आयेगी तो हम सबने वापस लौट जाने का विचार कर लिया। सोचा कि रास्ते ही में हम शाम का खाना खा लेंगे। कैम्प में अब तो भोजन मिलने का सवाल ही नहीं उठता था। वहां पर खाने का समय सात बजे का था। लौटते लौटते आठ तो बज ही जायेंगे।

सो ऐसा हम सब अभी सोच ही रहे हो कि तभी अचानक से एक ऑटो रिक्शा हमारे मध्य से गुज़र कर आगे करीब पचास फीट की दूरी पर रूका। हम सबका ध्यान उसी तरफ चला गया तो हम लोग उस तरफ ही देखने लगे। देखते देखते उस ऑटो रिक्शे में से एक लड़की निकली। अपनी पहाड़ी भेष भूषा में। उसे देखते लगा कि वह गजब की कोई सुन्दर परी थी। इतनी सुन्दर कि अमावस्या से भी अधिक काली जैसी कुरूप मैंने कल शाम को देखी थी, उसी के विपरीत वैसी ही सुन्दर मैं इसको देख रहा था। उस सुन्दर बाला के कानों में लंबे कई भागों में बंटे हुये चांदी के झुमके थे। जब भी वह ज़रा सा हिलती तो उन झुमकों की झंकार ही काफी थी हम सबको धराशायी कर देने के

लिये। उस लड़की की तरफ देखते रहना मेरे लिये एक अजूबा तो था ही, मगर उससे भी अधिक आश्चर्य का ठिकाना मेरा तब न रहा जब कि वह चलते हुये मेरी ही तरफ आने लगी। पास आई तो मैं उसको और भी आश्चर्य के साथ पहचानने का प्रयत्न करने लगा। जब वह पास आई तो पास आते ही मेरे अन्य मित्रों को नज़रअंदाज करते हुये मुझसे बोली कि,

"शरोवन, क्षमा करना, तुमको काफी प्रतीक्षा करनी पड़ी। दरअसल ऑटो मिल नहीं सका था और अकेले पैदल आना मैंने उचित नहीं समझा था।"

" उसकी बात को सुनकर मेरे अन्य साथियों को आश्चर्य हुआ ही, साथ ही मैं भी सशोपंज में पड़ गया। सोचा कि ये पहाड़ी सुन्दरता की अनमोल धरोहर बाला मेरा नाम कैसे जानती है।"

" तुमने शायद मुझे पहचाना नहीं। मैं कलवाली....."

" वह अमावस्या....." सहसा ही मेरे मुख से निकला तो वह खिलखिलाकर हंस पड़ी।"

"मेरा वास्तविक नाम रोमिका है। घर और समाज में मुझको प्यार से रोमी कहते हैं। वह कल मैं अपने कालेज में नाटक देखने आई थी। जानती थी नाटक समाप्त होते होते रात हो जायेगी। यहां किसी का कोई भरोसा तो है नहीं, सो अपनी सुरक्षा के लिये मैं ऐसा ही बेढंगा सा मेक अप करके निकला करती हूं। अपनी सुरक्षा करने का मेरा ये अनोखा तरीका है। अब तुम मिल गये हो सो फिर कभी ऐसा रूप नहीं धरा करूंगी। मैं नहीं जानती थी कि मेरे घर जाने से पहले तुम मार्ग में आ जाओगे और गच्ची भी खाओगे।"

इतना कहकर वह फिर से खिलखिलाकर हंस पड़ी तो मैं उसके चेहरे के साथ साथ अपने मित्रों की तरफ देखने लगा। रोमी और उसकी सुन्दरता को देखकर वे सबके सब धराशायी हो चुके थे। जाहिर था कि मेरी प्रेमिका उन सबकी प्रेमिकाओं से कहीं बढ़कर **100** हाथ आगे थी।

फिर काफी देर की मूकता के पश्चात रोमी ने ही बात आरंभ की। वह बोली कि,

" मैं शरोवन को अपने घर ले जा रही हूं। अपने पिताजी से इनको मिलाना बहुत आवश्यक है। बगैर उन्हें बताये हुये यदि मैं इनके साथ ऐसे ही घूमती फिरूंगी तो हमारे समाज के सारे लोग मुझे तो गलत समझेंगे ही साथ ही इनके साथ भी ठीक व्यवहार नहीं करेंगे।"

उसके इतना कहने पर मेरे एक मित्र ने कहा कि,

"आप जिनको अपने साथ अपने घर ले जाना चाहती हैं उन्हीं से पूछिये। हम नहीं सोचते थे कि हमारे व्यंग का इतना बड़ा महत्व निकलकर सामने आ जायेगा ?"

" व्यंग? शायद आप लोग नहीं जानते हैं कि पत्थरों पर पलनेवाली पहाड़िनें कभी भी किसी से मज़ाक नहीं किया करती हैं।" ये कहकर उसने मेरी तरफ देखा और फिर मेरा हाथ पकड़कर बोली,

" चलिये। यहां से केवल **5** मिनट का ही तो रास्ता है कुलगुड़ी का।"

मैं बेबस सा मूर्ख बना, ना तो कुछ कह सका और ना ही रोमी का कोई विरोध कर सका। बस अपने मित्रों की तरफ एक नज़र देखता हुआ चुपचाप उसके साथ चल दिया।

अपने स्थान कुलगुड़ी जहां पर वह रहा करती थी, उस तक पैदल जाने का समय 5 मिनट बताया था। मगर जब मैं चलने लगा तो 10 मिनट में भी उसके घर तक नहीं पहुंच सका। रोमी पहाड़ी मार्गों और ऊपर नीचे चलने की अभ्यस्त थी, सो वह ऊपर नीचे, पत्थरीले रास्तों पर फुदकती फिर रही थी। लेकिन एक मैं था जो थोड़ी ही दूर तक चलने पर थक जाता था। खैर, किसी प्रकार उसका घर आ गया। जिस स्थान को उसने गांव बताया था वह मुश्किल से दस या बारह मकानों का एक झुंड सा था। सब ही मकान छोटे और अपनी गरीबी का प्रतीक थे। शायद किसी भी मकान में विद्युत का प्रकाश नहीं था।

रोमी ने अपने मकान की सांकल खोली और अपने साथ मुझे भी अंदर आने को कहा। घर में घुसते ही उसने मुझे एक चारपाई पर बैठने को कहा तो मैं चुपचाप बैठ गया। तब रोमी ने घर में ही आवाज दी,

" बाबा, ये आ गये हैं। "

उसकी बात पर मैंने आश्चर्य से उसे देखा तो उसने बताया कि अंदर उसके पिताजी हैं, जिन्हें सदैव हुक्का और गांजा पीने से ही फुरसत नहीं है। घर में उसके और उसके पिता के सिवा अन्य कोई दूसरा नहीं रहता है। उसकी एक बड़ी बहन है जो शादी के पश्चात नैनीताल में अपने पति के पास रहा करती है। उसकी बहन के पति नैनीताल में नाव चलाया करते हैं। नाव चलाना ही उनकी दैनिक आय का जरिया है। बातों के दौरान ही वह रसोई में खाना भी बनाती रही। जिस प्रकार से वह ये सब कर रही थी उससे स्पष्ट लगता था कि घर में आये किसी मेहमान के कारण किया जा

रहा है। तमाम प्रकार की बातें वह करती रही। उसके पश्चात उसने मुझे खाना दिया और अपने बाबा को भी दिया। उसके बाबा को मैंने नमस्ते किया तो उत्तर में उन्होंने मुझे एक नज़र भर देखा और चुपचाप खाने बैठ गये। साफ था कि उन्होंने मुझमें कोई विशेष दिलचस्पी नहीं ली थी। खाने से पहले मैंने रोमी से सबके साथ खाने को पूछा तो उसने कहा कि, वह मेरे खाने के पश्चात ही खा सकेगी। सचमुच उसने ऐसा ही किया और आश्चर्य की बात कि जिस थाली में मैंने खाया था उसने उसे धोये बगैर ही उसमें अपने लिये खाना निकाला और खाया। ये देखकर मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा।

तब अंत में उसने मेरे लिये ऑटो रिक्शा मंगवाया और जाने से पूर्व उसने दूसरे दिन पांच बजे मुझसे मिलने का वचन ले लिया। मुझे विदा करने से पहले वह मेरे पास आई और अपने दोनों हाथ मेरे कंधों पर रखकर मेरी आंखों में देखती हुई मुझसे बोली,

" ठीक से जाना और अपना ख्याल रखना। "

मैंने उसकी इस बात का कोई भी उत्तर नहीं दिया। केवल उसकी नीली, भूरी आंखों को देखकर ये नहीं समझ सका कि उनके बीच किसी बिल्ली के समान ठहरी हुई पुतलियां मुझे देख रही हैं अथवा कहीं अन्यत्र। इसके अतिरिक्त उसकी बेमिसाल सुन्दरता और गरीबी का रहर्न सहन देखकर कुछ अजीब सा प्रतीत होता था। कानों में झुमके और पैरों में पायल, ज़रा सा भी पैर हिलाती थी तो सारे वातावरण की हवाओं तक में झंकार हो जाती थी। इस प्रकार की उनकी गूंज की ध्वनि बड़ी देर तक कहीं अंधेरों

को चीरती हुई अपना संदेश प्रसारित करती प्रतीत होती थी। जाते जाते उसने एक बात और भी कही। बोली कि,
" यहां पहाड़ पर आये कितने दिन हुये हैं तुमको ? "
"आज दसवां दिन है।" मैंने कहा तो उसने तुरन्त पूछा " कितने दिनों से तुम नहाये नहीं हो ?"
" ? "

मैं आश्चर्य से उसका मुख देखने लगा।

" चौंकों मत। तुम्हारे कपड़ों से गंध आती है, इसीलिये पूछती हूं।"

" जब से आया हूं तब से केवल दो बार नहाया हूं। वह भी बड़ी मुश्किल से "
" हे, भगवान। बस दो बार? तुम्हें चैन कैसे पड़ जाता है? "
" रोज़ रोज़ कैसे नहा सकता हूं। बर्फ से भी ज्यादा ठंडा पानी है। छूने का भी मन नहीं करता है। फिर सबके सामने खुली हवा में झरने के पानी में मुझसे नहीं नहाया जाता है। जिझक आती है मुझे।"
" तो ठीक है। कल अपने कपड़े साथ में लेकर आना। जो पहने होगे उन्हें धो दूंगी। यहीं पर नहा भी लेना। मैं पानी गर्म कर दूंगी। कल ही नहीं बल्कि प्रतिदिन स्नान करना। मैं तुम्हारे वास्ते पानी गर्म करके रखा करूंगी।"

मेरा विवाह नहीं हुआ था। मगर पत्नी की सेवा और प्रेम कैसा होगा, इसका अंदाजा मुझको रोमी की बात सुनकर हो गया था।

ऑटो से अपने कैंप में पहुंचा। सारे मित्र मेरी प्रतीक्षा में बैठे हुये थे। मुझे देखते ही सबके सब उठ खड़े हुये। एक साथ सब ही ने मुझपर प्रश्नों की बौछार लगा दी। मैंने किसी

भी बात का कोई उत्तर नहीं दिया। केवल चुप बना रहा। अपनी दशा पर खीझ और खुद अपने हालात पर मुझको क्रोध आने लगा था। दोस्तों की मूर्खता और मनोरंजन के कारण मैं एक बड़ी मुसीबत में फंस चुका था। अनजान, अपरिचित और गैर जातिय लड़की मुझमें अपना पति तलाश कर चुकी थी। बगैर मेरी सहमति लिये वह मेरी आरती उतार रही थी। दोस्तों के प्रति खीझ आना बहुत स्वाभाविक ही था। मित्रों ने मेरी परेशानी समझी। वे गंभीर हुये। मेरी परिस्थिति पर विचार किया और तब जाकर सलाह दी कि जाकर मना कर दो। या फिर झूठे से कह दो कि तुम विवाहित हो।

मैंने उनसे तो कुछ नहीं कहा। मन में ही सोचा कि क्या सचमुच में मना कर सकूंगा मैं उससे, जो उसके प्यार का इकरार नहीं कर सका, वह इनकार कैसे कर सकेगा। तमाम बातें मेरे सामने आ चुकी थीं। एक से बढ़कर एक खतरनाक मोड़ मेरे मार्ग में आते जा रहे थे। सबसे बड़ी कठिनाई, वह हिन्दू लड़की थी और मैं एक ईसाई पास्टर का लड़का था। वह बुतपरस्तथी और मेरा परमेश्वर बुतपरस्ती के सख्त खिलाफ था। हांलाकि मैंने किसी से कोई वायदा नहीं किया था लेकिन फिर भी अपने मसीही समाज, और मसीही धर्म की लड़की के लिये नहीं लड़ पा रहा था, ऐसी दशा में एक गैर मसीही लड़की के लिये कैसे लड़ने की शक्ति जुटा सकता हा। रोमी मेरे सपने देखने लगी थी तो मेरा ख्याल था कि कोई अन्य भी मेरे सपने सजा रहा था। अपनी दशा और मजबूरियां सामने पाकर मैं उस समय अपने आपको संसार का सबसे कमजोर मनुष्य समझने लगा। जीवन का ये कठोर

सत्य मेरे सामने खड़ा था कि प्रेम के अनजाने पथ पर मनुष्य पग तो रख देता है, मगर जब यात्रा में कठिनाइयां सामने आने लगती हैं तब उसकी समझ में आता है कि जो कुछ उसने कल्पनाओं और सपनों में देखा और सोचा था वह तो झूठ है। सच तो वह है जो कि वह भुगत रहा है। अनजाने में किसी भोली बाला से प्रेम का वादा कर बैठा था, अनजाम तो भुगतना ही था मुझको। मुझको स्पष्ट दिखाई देने लगा था कि आंख बंद करके जो मैंने मूर्खता कर डाली थी, वह मुझको आनेवाले दिनों में किसकदर भारी पड़ेगी।

रोमी सुन्दर ही नहीं बल्कि मैं समझता हूं कोसानी और कुमांऊ के उस समस्त पर्वती क्षेत्र में शायद ही कोई दूसरी लड़की उसके बराबर सुन्दर होगी। वह समझदार थी। दुनियादारी का ज्ञान उसको मुझसे कहीं ज्यादा था। गरीबी में पली और बढ़ी थी, इसलिये हर छोटी से छोटी वस्तु का मूल्य जानती थी वह। एक भली, सुशील और सभ्य पत्नी के समस्त गुणों की वह मलिका थी, मगर फिर भी मैं उसका हाथ पकड़ने की क्षमता नहीं रखता था। कारण था, मेरा धर्म, मेरा समाज और मेरे मसीही मार्ग उसके बताये हुये रास्तों पर कदम से कदम मिलाकर साथ चलने की अनुमति नहीं देते थे। उसकी मुहब्बतों के बनाये हुये अक्शों पर मेरी तस्वीर कब तक जीवित रह सकती थी कब तक उसके पत्थरों के भगवानों के गिर्द उसकी अथाह चाहतों के जलाये हुये दियों की लौ अपना प्रकाश दे सकती थी? जीवन की इस कठोर वास्तविकता को भी मैं अभी तक नहीं जान सका था।

दूसरे दिन शाम को वह मुझसे मेरे कैम्प पर ही, जहां पर मैं ठहरा हुआ था, मिलने आ गई। बगैर किसी भी झिझक और जमाने की किसी भी ऊंच नीच की परवा किये हुये बगैर। इस बार वह अपने पहाड़ी लिबास में न आकर बल्कि सफेद शलवार और कुर्ता पहनकर आई थी। सफेद वस्त्रों में उसका रूप यूं लग रहा थ्द्धा कि जैसे आसमान से किसी फरिश्ते ने परमेश्वर से पूछे बगैर इस धरती पर आकर अपनी शरण ले ली है।

" देख शरोवन तेरी 'एंजिल' आ गई। वाकई तू नसीब वाला है। तूने यदि इसे ठुकराया तो सारी ज़िन्दगी भर तू खुद को मॉफ नहीं कर सकेगा।"

उसे देखते ही मेरा मित्र जो कि मेरी बगल में खड़ा था, मुझसे बोला। अपने मित्र की बात और रोमी को अचानक से देखते ही मैं फिर एक बार उसके रूप और गुणों की प्रसंशा में कुछ भी नहीं कह सका था।

दो दिन के पश्चात ही हमारे कैम्प को कोसानी छोड़कर भुवाली जाना था। भुवाली से जाकर नैनीताल में एक दिन ठहरकर हमको वहां से काठगोदाम चले जाना था। काठगोदाम से गाड़ी पकड़कर फिर हमको वापस अपने घर चले जाना था। रोमी को मैंने अपना ये सारा कार्यक्रम बता दिया था। बता इसलिये दिया था क्योंकि उसने मुझसे पूछा था। मेरे जाने की बात सुनकर वह सचमुच ही बहुत उदास हो चुकी थी। उस शाम को जब मैंने अपना समय उसे दिया तो वह मुझको कोसानी के हर अच्छे से अच्छे स्थानों को दिखाती फिरी थी। मेरे पास समय कम था, शायद इसी

कारण वह अपना अधिक से अधिक समय मेरे साथ व्यतीत कर लेना चाहती थी।

तब उस रात बड़ी देर तक वह भरी चांदनी रात में चिनार के वृक्षों के नीचे एक बॉल्डर पर मेरे साथ बैठकर बातें करती रही थी। इसी बॉल्डर से नीचे पहाड़ों की घाटी दूर नीचे तक गहरी होती चली गई थी। चिनार के पेड़ों से चांदनी की किरणें छान छनकर नीचे हमारे शरीरों के ऊपर किसी सांप के शरीर से उतरी हुई सूख़ी केंचुल के समान जाली बना रही थीं। चारों तरफ ख़ामोशी थी। इस ख़ामोशी में भी एक प्यारी सी शांति थी। कहीं भी कोई शोर और आवाज जैसी चीज नहीं थी। चारों तरफ कुंमाऊं की फैली हुई पर्वत श्रृंखलाओं पर चांदनी अपने भरपूर यौवन के साथ पसरी पड़ी थी। भरा पूरा थाल सा चांद था। दूर दूर तक काफी कुछ स्पष्ट दिखाई देता था। वनस्पति के वृक्ष, पर्वतों के बदन और तमाम विभिन्न प्रकार के सारी कायनात के स्थान स्थान पर बिखरे हुये अवशेष से देखते ही लगता था कि जैसे सब ही बदन अपने परमेश्वर की इबादत में झुके हुये उसे इस पर्वती मूक रात्रि में आकाश की तारिकाओं के साथ नमन कर रहे हैं।

इसी बीच रोमी ने मुझको मेरा कंधा स्पर्श करते हुये कहा कि,

" बाबू।"

" हूं।" मैंने बगैर उसकी तरफ देखे हुये ही कहा।

" वह चांद देखते हो ?"

" हां।"

'' ऐसा ही पूरा थाल सा चांद शरद श्रृतु में पड़ेगा। खूब ठंड पड़ रही होगी तब तो। अपने सारे गर्म कपड़े लेकर आना तुम। पहाड़ों पर इस शरद श्रृतु की चांदनी में विवाह का मुहूर्त शुभ माना जाता है। यहां पर यही एक दिन ऐसा होता है जबकि कोई भी लड़की अपनी पंसद का वर चुन सकती है।''

'' ?''

उसकी बात सुनते सुनते मैं सहसा ही उसका मुख देखने लगा। मगर वह अपना सिर नीचे किये हुये कह रही थी। उसने नहीं जाना कि मैं उसे देख भी रहा हूं। अपनी ही धुन में उसने कहना जारी रखा था.....'

'' तब और भी लड़के वहां पर बैठे होंगें। हमारा पूरा समाज ही बैठा होगा। एक प्रकार से पूरा उत्सव होगा। जो लड़कियां अपना विवाह अपनी पंसद से करना चाहेंगी वे अपनी वरमाला अपनी पंसद के लड़के के गले में डाल देगी। तुम आकर वहीं बैठ जाना। तब मैं सब के सामने ही तुम्हारे गले में अपनी वरमाला डाल दूंगी। ऐसा होने के बाद फिर कोई भी हमारा कुछ नहीं कर सकेगा। तुम यदि नहीं आये तो मुझे अपना विवाह मेरे समाज के नियमानुसार जहां तय हुआ है वहीं करना होगा। निगम नाम है उसका। बहुत ही खराब और बिगड़ा पहाड़ी है। मुझे ज़रा भी पसंद नहीं है। अगर किसी कारण तुम नहीं आये तो जानते हो कि मैं तब क्या करूंगी ?''

''? '' उसके इस कथन पर मैं अचानक ही चौंकता हुआ संभलकर बैठ गया। रोमी ने भी मुझको देखा तो मैं उसकी आंखें देख कर खुद ही उदास हो गया। रोमी की नीली

आंखों में आंसू भर आये थे। इस प्रकार कि उन आंसुओं में चंद्रमा के टूटे हुये टुकड़ों के प्रतिबिम्ब स्पष्ट झलकने लगे थे।

" तुम यदि नहीं आये तो मैं इसी घाटी में कूदकर अपनी जान दे दूंगी।"

" कैसी बच्चों जैसी बातें करने लगी हो। तुमने अपने आप जीवन का इतना बड़ा निर्णय ले लिया और मेरे बारे में कुछ जाना भी नहीं ?"

मैंने आश्चर्य से कहा तो वह अपना सिर मेरे कंधे से टिकाकर बोली,

"मुझे कुछ नहीं जानना है तुम्हारे बारे में। सच बाबू, मुझे कुछ भी नहीं जानना है। हां, मैं केवल एक बात जानना चाहती हूं।"

" क्या ?"

" मैं तुम्हें अच्छी लगती हूं ? " कहकर वह अपने हाथ से मेरा मुख अपनी तरफ घुमाकर, अपनी नीली, गहरी आंखों को मेरी आंखों में डुबाते हुये बोली।

रोमी ने पूछा तो मैंने हां में अपना सिर हिला दिया। तब वह जैसे बहुत ही सन्तुष्ट होते हुये बोली,

" मैं बस यही सुनना चाहती थी तुमसे।" इतना कहने के पश्चात उसने अपना सिर बहुत ही उदास और ग़मगीन होकर मेरे कंधे पर फिर से रख दिया था। इस प्रकार कि उसके अतिरिक्त लंबे, घनेरे बालों ने नीचे मेरी गोद से सरकते हुये मेरे पैरों को भी चूम लिया।

उस रात को मैं कैम्प में भी समय पर नहीं पहुंचा। चांद डूब गया था, हमारी प्रेम की उदास और

अकारण ही थकी थकी सी बातों को सुनकर। रात ठंड के कारण ठिठुरने लगी थी। हर तरफ अब अंधकार का आलम धा। सारा पहाड़ी इलाका गहरी नींद सो चुका था। ठंड के कारण मुझे अब छींकें आने लगी धीं। जब मैं रोमी के साथ अपने स्थान से उठा था तो रात्रि के तीन बज रहे थे। उठने के पश्चात ही मैंने रोमी के हाथ देखे। गोरे, पतले परियों जैसे हाथ थे उसके। दोनों हाथों में उसने केवल एक एक मोटी सफेद ही रंग की चूड़ी पहन रखी थी। उसके वस्त्रों के साथ ये उसके आभूषणों का किस प्रकार का समन्वय ॥, मुझे इस बारे में कुछ भी ज्ञान नहीं था। मैंने भी उससे कुछ नहीं पूछा। केवल वार्ता का विषय बदल जाये, यही सोचकर उसके हाथों को निहारता हुआ मैं उससे पूछ बैठा,

" आज दस्ताने नहीं पहने तुमने। तुम्हारी गठियाबाई का क्या हुआ ?"

" तुमने मेरे हाथों को पकड़ा तो उनका सदा के लिये इलाज हो गया है। अब देखो तो, दोनों हाथ ठीक हैं, अंगुलियां भी सीधी हैं। मैं अब इनका खूब अच्छी तरह से इस्तेमाल कर सकती हूं।"

ये कहते हुये वह मुस्कराई तथा तुरन्त ही अपने दोनों हाथों को मेरे गले में डाल कर मेरी आंखों और चेहरे को देखने लगी। कुछेक पलों तक वह इसी मुद्रा में बनी रही। फिर बाद में बोली,

" आज बांहें डाली हैं मैंने तुम्हारे गले में, अवसर आने पर वरमाला डाल दूंगी सबके सामने।" कहकर उसने अपना सिर मेरे सीने पर रख दिया। बहुत सारी हसरतों को संजोते हुये।

रोमी ने फिर एक बार अपने असीम चाहतों से भरी बातों के द्वारा हमारे मध्य का वातावरण बोझल कर दिया था। उसकी बातें, उसका मेरे प्रति अटूट विश्वास और उसका भविष्य का वह सपना कि जिसके बारे में उसकी हरेक हरकतों से वह पवित्र प्रेम की आस्था झलक रही थी कि, जिसका ख्याल तक मैं कभी नहीं कर सका था। जीवन पथ पर मेरे हाथों से प्रेम की पतवार को अपनी मर्जी से पकड़कर उसने अपने प्रेम की नैया को धारा में डाल दिया था। हमारे प्रेम की इस यात्रा का कौन सा ठहराव होगा, कहां हम पहुंचेंगे और केवल एक सप्ताह से भी कम उम्र की हमारी प्रेम की कहानी का अंतिम हश्र कैसा अभागा और कैसा सुन्दर होगा, हम दोनों में से कोई भी कुछ नहीं जानता था। मैं यहां पहाड़ों पर क्या करने आया था और क्या कर रहा था? मैं क्या लेकर आया था और अब क्या लेकर यहां से जाऊंगा? मैं जानता था कि अनजाने में ही मैंने पहाड़ों की इस प्रेमनगरी में अपना कदम रख दिया था। एक ऐसी भंवरधारा में मैं फंस चुका था कि जिसका फिलहाल कोई भी ठोस धरातल मुझको नहीं दिखाई देता था। स्वतः ही मुझे ऐसा लगता था कि मेरे पैरों से जैसे जमीन हटती जा रही है, और मैं असहाय सा, बेसहारा तथा बगैर किसी भी आधार के केवल वायु में उड़ता जा रहा हूं। रोमी ने जिस प्रकार धीरे धीरे करके अपने प्रेम के पग बढ़ाते हुये मुझको पाने के लिये अपने प्रेम की कहानी की शुरूआत की थी, उसकी पवित्रता और विश्वास को देखते हुये उसके अंतिम पृष्ठों से हट जाने का मैं साहस भी नहीं जुटा पा रहा था।

चुपचाप, पत्थरीली भूमि पर डूबे हुये चन्द्रमा के मद्धिम प्रकाश में रास्ता ढूंढ़ते हुये हम दोनों घर पहुंचे। उसके घर के दरवाजे के सामने आकर मैंने मूक भाषा में उससे विदा लेने की अनुमति चाही तो उसने कहा कि,

" तुम्हें ठंड से छींकें आने लगीं हैं। मैं जल्दी से काढ़ा बनाये देती हूं, पीकर चले जाना।"

कोसानी छोड़ने से एक दिन पहले ही रोमी से मैंने विदा की समस्त औपचारिकतायें पूर्ण कर लीं थीं। वह भी इसलिये क्योंकि मैं जानता था कि हमारी बस बड़े सवेरे पौ फटते ही अपना स्थान छोड़ देगी, और इतना सुबह सुबह रोमी का मुझसे मिलने आना कठिन होगा। मगर मैं ये देखकर आश्चर्यचकित हो गया जब कि बस के रवाना होने से पहले रोमी मेरे पास कैम्प में ही आ गई। आकर उसने मेरे दोनों हाथ मेरे समस्त मित्रों और मेरे प्रोफेसरों के सामने ही पकड़ लिये। मुझे उसने एक कागज की थैली दी और फिर जैसे बहुत उदास स्वरों में वह बोली,

" बाबू! अपना ध्यान रखना। इसमें भगवान का प्रसाद है और खाना भी है। रास्ते में भूख लगे तो जरूर से खा लेना। तुम्हारे वापस आने का मैं आज और अभी से ही इंतजार करना शुरू कर दूंगी। शरद ऋतु की चांदनी मेरे प्यार की पुकार होगी।"

कहते कहते वह रूआंसी हो गई। मैं उसकी आंखों में झलके हुये आंसू देखकर जैसे टूटने लगा था।

दिल और आत्मा की सिसकती हुई दुखी, अनदेखी तमाम भावनाओं पर बड़ा सा भारी पत्थर का बोझ रखकर मैंने कोसानी और कुंमाऊं की बेमिसाल खुबसूरत पहाड़ियों से

ना चाहते हुये भी विदा ली। मार्ग के हरेक पल में, हर मोड़ और हरेक ठहराव पर रोमी मेरी आंखों के पर्दों को खोलकर मेरे दिल में बेचैनी मचाती रही। एक भी पल शायद ऐसा नहीं रहा होगा जब कि मैंने उसके बारे में न सोचा हो। सोचता रहा कि कैसी लड़की है कि जिसके केवल दोनों हाथ पकड़ने भर से ही उसकी ज़िन्दगी की राह का अंतिम रूख़ मेरी तरफ हो गया था? रूख़ भी ऐसा स्थिर कि वह मेरे बारे में कुछ भी जाने बगैर, मुझे अपनी जीवन नैया का मांझी समझते हुये हर दिन ही अपनी आरती के दिये जलाने लगी थी। मैं नहीं जानता था कि उसकी मुहब्बतों में मेरी आस में उसकी नीली आंखों से निकले हुये आंसुओं से जलते हुये इन बेमिसाल दीपों की लौ न जाने कब तक प्रज्वलित रह सकेगी? क्योंकि धर्म, समाज और जमाने के किसी भी नियमों के अर्न्तगत् मेरे बदन का खून तक उसकी असीम मुहब्बत का दिया जलाने की अनुमति नहीं देता था। मेरी मुसीबत ये थी कि जीवन की इस कठोरता को मैं किस प्रकार और कैसे उसे समझाता? वह मेरे अतिरिक्त मेरी किसी अन्य बात को अपने बदन, अपनी आत्मा और अपने जीवन के किसी भी दायरे से जोड़ने के पक्ष में नहीं थी। उसे तो केवल मैं दिखता था। केवल मैं_____उसका एक अकेला बाबू।

घर आया तो रोमी की चिंता और उसके साथ बिताये हुये पलों की स्मृतियों ने मेरा जीना दूभर कर दिया। खुद ही चुप और अपनों से कटकर रहने लगा। उदासी और गंभीरता मेरे चेहरे की बनावट में झलकने लगे। कभी खाया, कभी नहीं भी खाया, कहां गया, कब लौटा, क्यों गया और क्यों नहीं समय पर वापस आया? इस प्रकार के

तमाम प्रश्नों की मुझ पर मेरे परिवार में ही बौछार सी होने लगी। ऐसे में मां ने मेरी दशा को देखा तो भांप गई। उन्होंने अनुमान लगाया कि लड़का कहीं किसी न किसी चक्कर में फंस चुका है। सो एक दिन उन्होंने मुझे टोक भी दिया। वे बोलीं,

'जाने कौन सा रोग लगा बैठा है? ऐसा ही रहा तो बीमार पड़ जायेगा।'

पिता ने सलाह दी कि इसकी शादी कर दो। सब ठीक हो जायेगा। तब मां के तेवर पहले से भी अधिक चढ़ गये। वे और भी चिढ़कर बोलीं,

'किस् किस से करोगे? एक हो तो कहो भी। तितलियां सी पाल रखीं हैं इसने। देखना सब उड़ जायेंगी। एक भी नहीं मिलनेवाली है।'

और हुआ भी ऐसा ही। सचमुच बीमार पड़ गया। तितली भी उड़ गई। मेरी डायरी पर अपनी केवल चार पंक्तियां लिखकर उसने अपनी प्रेमकाा की सारी औपचारिकतायें पूर्ण करके अपने कर्तव्य से इतिश्री कर ली। उसकी अनायास पलायनता ने रोमी की मुहब्बत की सुलगती हुई अग्नि में जैसे घी का काम किया। मैं कोसानी जाने के लिये छटपटाने लगा। अक्टूबर में मैंने चुपचाप कोसानी जाने का प्रबंध भी कर लिया। मगर जाने से केवल एक सप्ताह पहले ही मैं फिर बीमार पड़ा। इस बार मेरी बीमारी कोई छोटी मोटी नहीं थी। टायफायड तो हुआ ही था, मगर साथ ही डाक्टर ने भविष्य में मेरे गुर्दे खराब हो जाने की चेतावनी भी दे दी थी। इसके साथ क्षय का भी प्रारंभिक प्रीकोशनल इलाज ले लेने की सलाह दी थी। मैंने सुना तो

रोमी का ख्याल और उसकी मुहब्बतों के सजाये हुये सपने स्वतः ही आवारा बादलों के समान उड़ने लगे। अपने आस पास मैं अपनी मौत की हवाओं को चुपचाप गुनगुनाते हुये सुनने लगा था।

अक्टूबर का महीना आया। ठंडी शरद ऋतु का थाल सा पूर्णमासी का चांद देखा तो मजबूरी से केवल हाथ मलकर ही रह गया। मैं बिस्तर पर पड़ा हुआ था। मेरा टायफायड ठीक होकर दोबारा हो गया था। मैं चांद को देखता तो सोचता इस समय तो मुझे कोसानी की पहाड़ियों पर होना चाहिये थ्द्धा। रोमी मेरी प्रतीक्षा कर रही होगी। मैं नहीं पहुंचा हूं तो कितना परेशान हुई होगी? न जाने उसके साथ क्या हुआ होगा? मेरी अनुपस्थिति से हताश और निराश होकर न जाने उस पर क्या बीती होगी? कितना छटपटाई होगी वह? शायद अपने पत्थर के भगवानों से न जाने कितनी ही बार उसने मेरी मन्नतें मांगी होंगी। मगर मैं उसे कैसे समझाता कि उसने यदि एक बार सच्चे मन से सच्चे जीवते परमेश्वर से मुझे मांगा होता तो शायद उसकी आरती के दीप कभी भी नहीं निराश होते। मैं बीमार नहीं पड़ता। मेरे कोसानी पहुंचने तक के मार्ग में कोई भी बाधा नहीं आती।

उस दिन पूरा थाल सा पूर्णमासी का चांद जैसे सिसक सिसककर बुझ गया। रात काली हो गई। मैं मजबूर बिस्तर पर पड़ा पड़ा अपनी किस्मत की खराब लकीरों को देखता हुआ बेमुरब्बत मुहब्बत के हाथ मलता रह गया। अपनी मजबूरी, अपनी रूठी हुई किस्मत और एक अनजान, अपरिचित सी पर्वती हिमबाला भोली रोमी की बेपनाह मुहब्बत की आरजू, इन सबने मुझे मानव जीवन के विभिन्न

आयामों के प्रति बहुत कुछ सोचने पर विवश कर दिया। मैं कोसानी जाने के लिये छटपटा रहा था, इसलिये नहीं कि मुझको किसी की चाहतों से भरी पुकार बुला रही थी, बल्कि इसलिये कि मुझको जाना चाहिये था। मैं किसी को भी पथ के बीच हिस्से में नहीं छोड़ना चाहता था। चाहता था कि एक बार रोमी को जाकर सब कुछ समझा दूं। बता दूं कि जो मार्ग उसने अनायास ही चुन लिया है उसका कोई भी भाग मेरे कदमों तक नहीं आता है। मैं जाना चाहता था इसलिये भी कि पहाड़ी सुन्दरता की अनमोल, नादान और भोली सी बाला जिसने अपनी असीम चाहतों के वशीभूत ये भी नहीं जाना कि मैं कौन हूं, क्या हूं, और मेरा अतीत कैसा है? यहां तक मुझ पर विश्वास किया कि मेरे कोसानी से वापस आते समय उसने मेरे घर का पता तक नहीं पूछा, बल्कि केवल मेरी आंखों में लगातार देखते हुये मेरे वापस आने की पूरी आशा की, उसको मैं प्रेम के जीवनपथ पर किस प्रकार बेआस और बेउम्मीद छोड़ सकता था?

किसी प्रकार मैं बिस्तर पर से उठने लायक हुआ। धीरे धीरे स्वस्थ हुआ। नौकरी पर जाना शुरू किया। नौकरी से जब लौटता तो रोमी का प्रतीक्षा भरा उदास चेहरा जैसे मेरा जबाबतलब करने लगता। मेरे आस पास कोई भी नहीं होता था, मगर फिर भी रोमी की स्मृतियां मेरे गले में अपनी बाहें डालकर जैसे एक ही प्रश्न पूछा करतीं,

'बाबू, पूर्णमासी का चांद क्या फिर कभी नहीं उगेगा ?'

फिर एक दिन मैं घर से झूठ बोलकर कोसानी पहुंचा। घर पर कह दिया था कि मुझको प्रकाशन के कार्य से बाहर जाना है। दो हफ्ते भी लग सकते हैं। जब मैं दोबारा

कोसानी पहुंचा तो उन दिनों मैदानी इलाकों में हल्की हल्की ठंड पड़ना आरंभ हो चुकी थी, मगर पहाड़ों पर यही ठंड बर्फीली हवाओं के साथ मिल कर बदन को काटती थी। अक्टूबर **1974** का महिना था। मेरे कोसानी पहुंचने के केवल दो दिन बाद ही पूर्णमासी पड़नेवाली थी। दिन भर चिनार ख़ुश नज़र आते, पर शाम होते ही उसकी पत्तियां ठिठुरने लगतीं। आकाश में अक्सर ही ठंडे बादलों के काफिले ठहरे रहते। शाम का धुधंलका पड़ना आरंभ होता उससे पहले ही कुलगुड़ी के मकानों से रसोई का धुंआ उठने लगता था। इस प्रकार कि वह भी ऊपर उठता हुआ बादलों के लिहाफ के साथ कभी नीचे पहाड़ों की घाटियों में विलीन हो जाता तो कभी यूं ही पास के वातावरण में जैसे मनमानी चहलकदमी करने लगता था।

जब मैं कोसानी के बस स्टेशन पर उतरा तो उस समय दिन भर का थका थकाया सूरज संध्या की बिखरी हुई लालिमा में पहाड़ों के पीछे से नीचे उतरने की तैयारी कर रहा था। हवाओं में हर पल भरती हुई ठंड इस बात का प्रतीक थी कि रात में पड़नेवाली सर्दी में बर्फीली हवाओं का मिश्रण भी हो सकता है।

बस से नीचे उतरते ही तुरन्त एक पहाड़ी कुली ने पहले तो मुझको नमस्कार किया, फिर मेरे हाथ से अटैची लेते हुये उसने पूछा कि,

" डाक बंगले जाना है शाब? "

" नहीं। "

" होतल ?"

" नहीं। "

''?''

वह मेरा आश्चर्य से मुंह ताकने लगा तो मैंने कहा कि,

'' कुलगुड़ी।''

''??'' उसने एक दम ही चौंककर मुझको आश्चर्य से देखा, फिर जैसे कुछ सोचकर वह बोला,

'' कुलगुड़ी में किसके घर शाब ?''

'' वहीं चलो।मैं बता दूंगा।''

मेरे कहते ही उसने अटैची अपने सिर पर बंधी रस्सी में लटकाई और चल दिया।मैं भी चुपचाप अपने आस पास देखता हुआ उसके साथ साथ चलने लगा।मार्ग में ऊंची नीची, पगडंडियों और ढलान से उतरते समय मेरे मन में विभिन्न प्रकार के अच्छे बुरे ख्याल थे।सोचे जा रहा था कि मिलेगी भी या नहीं? यदि मिली भी तो न जाने कैसा व्यवहार वह मेरे साथ करे? हो सकता हो ना भी मिले? विवाह कर लिया हो शायद उसने? बहुत नाराज़ हो सकती है वह मुझ पर? पता नहीं कैसी हो वह अब.....?'

'' गांव तो आ गया शाब।किस घर में जाना है शाब ?''

मेरी विचारों की तन्द्रा तब टूट गई जब कि कुली ने मुझसे पूछा था।कुलगुड़ी आ चुका था।मैंने कुली की बात को सुनकर अपने चारों तरफ देखा।पहले जैसा तो था लेकिन बहुत कुछ बदला बदला भी नज़र आ रहा था।इधर एक वर्ष के अरसे में काफी नये मकान, और वह भी पक्के बन गये थे।कुछेक घरों पर विद्युत के तार जा रहे थे।वे इस बात का सूचक थे कि वहां पर अब विद्युत का उपयोग होने लगा था।

" वह जो सामने कोने पर ढेर सारे खुबानियों के वृक्ष लगे हैं, उसी के सामने वाले मकान में मुझको जाना है।"

मैंने कुली को इशारे से बताया तो वह चुपचाप उधर ही चल दिया। साथ में मैं भी चल दिया, मन में एक अपराधबोध की भावना को साथ लिये। कुली जैसे ही रोमी के मकान के सामने पहुंचा तो सहसा बोल उठा,

"यह तो बंद है शाब। लगता है कि शब कहीं गये हुये हैं।"

मैंने देखा तो सचमुच ही जंक से सनी सांकल के ऊपर कोई पुराना ताला लटका हुआ मेरा मुंह चिढ़ा रहा था। मैंने मकान की दशा को देखा तो लगा कि वहां पर जैसे काफी दिनों से कोई रह भी नहीं रहा था। जीर्ण शीर्ण होते मकान के चारो तरफ ऊंची ऊंची घास उग आई थी। खुबानी के सारे पेड़ों की लगता था कि एक अरसे से छंटाई भी नहीं हुई थी। मकान की छत से जगह जगह पर मकड़ी के जाले चिपके हुये थे। मुझे समझते देर नहीं लगी कि यहां पर एक अरसे से शायद कोई भी नहीं रह रहा है। रोमी जब थी तो यही मकान कितना सुव्यवस्थित रहता था। वहां की बदली हुई दशा देखकर स्वतः ही मेरा मन उदासियों के घेरे में लिपटता चला गया। एक समय था जब कि इसी स्थान पर कभी रोमी अपने हाथ में आरती का दिया लिये हुये मेरा स्वागत किया करती थी। मेरी आरती उतारने के पश्चात ही वह मुझे घर में ले जाती थी, पर आज वहां पर मनहूस इलाकों में बसेरा करनेवाली अबाबीलें भी मुझे देखने नहीं आई थीं। काफी देर से प्रतीक्षा करते हुये कुली से मैंने तब अंत में कहा कि वह मुझे डाक बंगले ले चले।

डाक बंगले पर पहुंचकर मैंने कुली को पैसे देकर विदा किया। अब तक शाम पूरी तरह से डूब चुकी थी। अंधेरा घिर आया था, और चिनार के वृक्षों की चोटियों पर पक्षी बसेरा लेने के लिये अपने पंख फड़फड़ाने लगे थे। शहर की विद्युत बत्तियां मुस्कराने लगी थीं। संयोग से मुझको डाक बंगले में ठहरने का स्थान मिल गया। टूटे हुये मन से मैंने डाक बंगले के कमरे में अपना सामान रखा। अटैची एक ओर रख दी और यूं ही बगैर कपड़े और जूते उतारे हुये पलंग पर लंबा लंबा लेट गया। रोमी की अनुपस्थिति से मन में तरह तरह के बुरे ख्याल आने लगे थे। मैं लेटे हुये सोच रहा था कि यदि रोमी ने अपना विवाह कर लिया है तो उसको ढूंढ़कर उससे क्षमा मांगकर अपने देश वापस चला जाऊंगा। यदि कुछ अन्य बात है तौभी उसके बारे में सारी जानकारी लेकर ही जाऊंगा। ऐसा सोचते हुये मुझे कब नींद आ गई, मुझे कुछ पता ही नहीं चल सका था। फिर जब अचानक ही आंख खुली तो रात के लगभग नौ बज रहे थे। गई शाम का मैं सोया था, और अब जाकर जागा था। मैं समझ गया था कि यात्रा की थकान के कारण ही मुझको इसकदर गहरी नींद आ गई थी कि मैं कई घंटों लगातार सोता ही रहा था।

मैं बिस्तर पर से उठा। अपने कमरे को एक नज़र देखा। फिर बाथरूम में जाकर मुंह पर पानी के छींटे मारे और तौलिया से मुह पोंछकर वापस कमरे में आ गया। कमरे में कुछेक क्षण ठहर कर मैंने खिड़की से बाहर के वातावरण को एक बार निहारा; चांद वृक्षों के ऊपर से होता हुआ किसी पहाड़ की चोटी का सहारा लेकर मुझे ही ताक रहा था। मैं

चुपचाप बाहर निकल आया। जब निकलकर बाहर देखा तो पर्वतों पर निखरती हुई चांदनी का फैलता हुआ झाग देखकर मन एक बार को शांत सा हुआ। चिनारों की चोटियों के पीछे से चन्द्रमा अब मुस्कराकर मुझे ही देखे जा रहा था। दूर दूर तक जहां भी निगाहें जा सकती थीं, पहाड़ों के साये झुके हुये अपने विधाता की इस रात्रि में भी जैसे स्तुति कर रहे हो। बाहर आया तो चुपचाप डाक बंगले की लोहे की लगी हुई रेलिंग पर अपने दोनों हाथ टिकाकर खड़ा हो गया। तभी अचानक से डाक बंगले का चौकीदार मेरे पास आ गया। एक अभिवादन करते हुये वह मुझसे बोला कि,

" शाब, आप आते ही सो गये थे। जानता हूं कुछ खाया भी नहीं होगा आपने। अगर आप कहें तो मैं आपके लिये खाना अपने घर से बनवाकर ला सकता हूं अथवा यहां भी थोड़ा बहुत बना सकता हूं।"

"नहीं, मुझे कुछ खास भूख तो नहीं है, रात काट लूंगा मैं। वैसे तुम रहते कहां पर हो ?" मेरे पूछने पर वह बोला कि,

" कुलगुड़ी में। यही कोई 200 गज का रास्ता होगा।"

"?"

कुलगुड़ी का नाम सुनते ही मेरे कान ठिठक गये। मैं उसका चेहरा मद्धिम चांदनी में देखता हुआ उसे पहचानने का प्रयत्न करने लगा। मगर जब नहीं पहचान पाया तो मैंने उससे पूछा कि,

" कुलगुड़ी में कितने दिनों से रह रहे हो? "

" यही कोई दस महीने से। पिछले साल ही तो स्थानांतरण होकर आया हूं। सरकारी नौकरी है तो करनी तो है ही।"

उसकी बात को सुनकर मैंने सोचा कि हो सकता है ये रोमी के बारे में कुछ जानता हो। मैं ऐसा सोच ही रहा था कि तभी चौकीदार ने मुझको एक संशय से देखते हुये पूछा कि,

" आप यहां घूमने आये हो ?"

" नहीं।"

" फिर ?"

" मैं एक काम से आया हूं। दो एक दिन रहकर जब मेरा काम समाप्त हो जायेगा तो चला जाऊंगा।"

" वैसे आप कहां के रहने वाले हैं? "

" शिकोहाबाद। उत्तर प्रदेश का हूं।"

" कोई सरकारी काम था।"

" नहीं, ऐसा ही कारोबार से सम्बंधित था।"

मेरी बात सुनकर चौकीदार चुप हो गया तो फिर मैंने उससे झूठ बोला। कहा कि,

" मैं फलों का व्यापार करता हूं। पिछली साल जब घूमने आया था तो यहीं कुलगुड़ी में रहनेवाले एक फल विक्रेता की मेन मार्केट में फलों की दुकान थी। उसने मुझसे इस कार्य में सहायता करने की बात कही थी। मगर आज जब शाम को उसके घर पहुंचा तो घर पर ताला पड़ा हुआ था।"

"कौन है वह शाब? मैं जानता हूं शायद उसको? "

" गोरखा निखल कहते थे उसको।" मैंने रोमी के पिता का नाम बताया तो चौकीदार अचानक ही एक संशय से मेरा मुख आंख फाड़कर देखने लगा। लगा जैसे कि वह मुझमें कुछ ढूंढ़ने की चेष्टा कर रहा हो। साथ ही उसकी निगाहें मेरे

चेहरे पर एक प्रश्नसूचक तथा भेद भरी भावना से जमने लगी तो मैंने उसे टोक दिया। बोला कि,

" लगता है कि तुमको मेरी बात पर विश्वास नहीं आया।"

" विश्वास तो हुआ पर ये समझ में नहीं आ सका कि आपने गोरखा निखल से कैसे व्यापार के बारे में बात कर ली।"

" तुम्हारा मतलब।"

" मतलब यही शाब कि निखल तो कभी दुकान पर बैठता ही नहीं था। वह तो नंबरी गंजेड़ी और नशेबाज़ था, दुकान क्या संभालता?"

चौकीदार ने अपना माथा पकड़कर कहा तो मैंने उससे कहा कि,

" लेकिन उसकी दुकान तो थी।"

" हां, दुकान तो थी, पर उसे उसकी लड़की चलाती थी।"

" तो फिर उसी से मिलवा सकते हो मुझे। शायद मेरा काम बन जाये।"

मैंने एक आशा से उसे निहारा तो चौकीदार जैसे भरी आवाज़ में बोला,

" उसकी लड़की से मिलने तो आपको बहुत दूर जाना होगा शाब।"

चौकीदार की बात को सुनकर अचानक ही मेरे हृदय में धक् सी होकर रह गई। एक अज्ञात भय की संभावना से कंपित होते हुये मैंने उससे आगे कहा,

" तुम्हारा मतलब ?"

" आप क्या करोगे सुनकर बाबू शाब। बहुत लंबी और बेहद दर्दीली कहानी है उस अभागिन की। आप वापस चले जाओ, आपका काम कभी भी नहीं बनने वाला है। हां, धंधा ही

करना है तो बाजार में और भी दुकानदार हैं। मैं उनसे मिलवा दूंगा।''

किसी अनहोनी ख़बर से मुझे वास्ता करना होगा। ऐसा सोचकर भयभीत होते हुये मैंने चौकीदार से जैसे याचना सी की। बोला,

'' तुमने तो मेरी जिज्ञासा को और भी बढ़ा दिया है। बता सकते हो कि क्या हुआ निखल और रोमी का? कहां हैं वे लोग?''

भावावेश में अचानक ही रोमी का नाम मेरे मुख से निकल गया तो चौकीदार जैसे अपनी जगह पर से उठा और फिर से बैठ गया। उसकी इस हरकत पर मैं समझ गया कि मुझसे भूल हो चुकी है। मैंने अनायास ही रोमी का नाम ले दिया था।

'' आप रोमी को पहले से जानते हैं शाब?''

'' हां।'' मैंने अपने हथियार डालने आरंभ कर दिये थे।

'' इसका मतलब आप ही रोमी के मैदानी बाबू हैं? ''

''? ''

मैं अनुत्तर हो चुका था। कहा कुछ भी नहीं केवल मूक बना नीचे भूमि पर देखने लगा। एक अपराधबोध की भावना से ग्रसित मैं उससे आंख भी नहीं मिला पा रहा था।

बड़ी देर तक हम दोनों के मध्य ख़ामोशी एक तीसरे बजूद के समान हमारा मुंह ताकती रही। समझ में नहीं आया कि मैं उससे क्या बोलूं। कहां से बात को फिर से शुरू करूं। रोमी का मेरे पीछे क्या हश्र हुआ है, इसका अंदाजा मुझको हो चुका था। अब केवल कानों के द्वारा सुनना और बाकी रह गया था।

फिर काफी देर की चुप्पी के पश्चात चौकीदार ने जैसे मुझ पर दोष लगाते हुये अपनी बात शुरू की। वह अपनी थकी थकी आवाज़ में मुझसे बोला कि,

"ये आपने बहुत बुरा किया शाब। बहुत ही बुरा किया। पता नहीं भगवान आपको . . ? कहते हुये वह अचानक ही थमा, फिर आगे बोला,

" वह नादान और भोली लड़की आपको प्यार नहीं करती ह्मी। वह आपकी पूजा करने लगी थी। दिन रात आपकी तपस्या करती थी वह। इतना अधिक प्रेम करती थी आपको कि वह फूलों से आपका नाम ज़मीन पर लिख्र लिख्रकर उसे दिन में न जाने कितनी ही बार नमन किया करती थी। आपका उसने बहुत इंतजार किया था। बहुत रोई थी आपके न आने पर। और एक दिन अचानक ही जब अपना दुख्र बर्दाश्त नहीं कर सकी तो नीचे घाटी में कूद मरी। ऐसी गहराई तक गई कि उसकी लाश भी किसी को देख्रने को नहीं मिल सकी। "

"मैं तुमको कैसे समझाऊं? कैसे बताऊं अपनी मजबूरियों को?" मैंने तड़पते हुये कहा तो चौकीदार बोला कि,

" प्रेम में धन दौलत, जाति, धर्म, देस परदेश, रंग रूप आदि जैसी दलीलें कोई मायने नहीं रख्रती हैं बाबू शाब। "

चौकीदार की बात सुनकर मैं अपना सिर पकड़कर वहीं पड़ी बैंच पर बैठ गया। समझ में नहीं आया कि अब मैं क्या करूं। कहां जाऊं। किससे अपना दुख्रड़ा रो लूं। कैसे किसी को समझाऊं कि मैं रोमी का ऐसा कौन सा 'बाबू' जिसकी केवल दो दिन की मुलाकात में उसकी दिल की गहराइयों से उतरकर उसकी आत्मा और उसके संसार में बस

गया था। पिछले वर्ष इन्हीं कोसानी के पहाड़ों पर मैंने प्रेम के बीज अनजाने में बिखेर दिये थे, और आज उन बीजों का फल, प्यार के फूलों के स्थान पर मैं अपने दामन में किसी की जली हुई प्यार की आस्थाओं के कांटे बटोरने आया था?

आकाश पर अचानक ही न जाने कहां से बादल घिर आये हो। दूर पहाड़ों के पीछे से कभी कभार बिजली की कौंध जैसे आंख मिचौली खेलती थी। बादलों का काफ़िला देखकर चन्द्रमा कभी का नदारद हो चुका था। चौकीदार डाक बंगले के चारों तरफ चक्कर काटने जा चुका था। इसी बीच अचानक आकाश से वर्षा की फुहारें सी पड़ीं तो मेरी तन्द्रा टूट गई। सोचा उठकर अंदर चला जाऊं, पर मन ने हां नहीं की। वहीं बैठा रहा। बैठा बैठा अपनी फूटी हुई किस्मत की लकीरों को फिर से जोड़ने का एक असफल प्रयास करने लगा। रोमी के साथ के बिताये हुये थोड़े से पल, उसकी आरजुओं के सबब से मिले चार दिन, उसकी बातें और उसके प्यार का अनकहा अहसास मेरी आंखों के पर्दे पर अपने आप ही एक चल चित्र के समान गुज़रने लगे। उसकी उन्हीं बातों में कही हुई वह बात...

' पत्थरों पर पलने वाली पहाड़िनें कभी भी किसी के साथ मज़ाक नहीं किया करती हैं'...', ' बाबू, यदि आप नहीं आये तो इसी घाटी में कूदकर अपनी जान दे दूंगीं।' मुझे एक के बाद एक याद आने लगीं थीं। मैं जानता था कि सचमुच रोमी ने कोई भी मज़ाक मेरे साथ नहीं किया हो। अपनी कही हुई बात उसने कर दिखाई थी। मेरे वियोग में वह सचमुच ही पर्वतों की घाटियों में समा गई थी। वह एक 'अमावस्या' बनकर मेरे जीवन में आई और अपनी

बेपनाह चाहतों से उसने चांदनी के फूल मेरे उजाड़ जीवन के चमन में खिलाने की कोशिश की थी, मगर ये मेरा बदनसीब था कि उन चांदनी के पुष्पों को मैंने सचमुच काली अमावस्या के कांटों में परिवर्तित कर लिया था।

कोसानी से चलने से पहले रोमी के दरवाजे पर मैं श्रृद्धा के पुष्प रखकर ग़म का मारा, खाली हाथ चुपचाप घर लौट आया। आया तो लगा कि जैसे रोमी सारे रास्ते भर मेरी ही बगल में मेरे साथ बैठी हुई है। घर पर आया तब भी ऐसा महसूस हुआ कि वह मेरे साथ ही है और मेरी हर बात का ध्यान रख रही है। पर मैंने किसी को कुछ भी नहीं कहा। अपने साथ हुये इतने बड़े हादसे का जिक्र मैंने किसी से भी नहीं किया। जो कुछ हुआ था उसको केवल अपने साथ ले जाने का विचार करके मैं चुपचाप अपने आप हर पल सुलगने लगा। अब यूं भी किसी भी अन्य में रूचि लेने का प्रश्न ही नहीं उठता था। जिसके लिये मैंने तमन्ना की थी, एक आस रखी, उसने बड़ी सादगी से किनारा कर लिया, और जिसने मेरे लिये तमन्ना की, मेरी उपासना की उसे मैंने ही खो दिया था। जीवन की इस सच्ची और कड़वी कठोरता को याद कर करके मैं चुपचाप रोता रहूं, जीवन का केवल यही इतना सा बाकी का सिला मेरे लिये रह गया था।

धीरे धीरे समय गुज़रा। पतझड़ हुये। मौसम बदले। बरिशें आई और भिगोकर चली गई। मैं बीमार पड़ा। ठीक हुआ। फिर बीमार पड़ा और फिर ठीक हुआ। जीवन मार्ग के विभिन्न आयामों पर अपने पड़ाव डालता हुआ मेरी ज़िन्दगी का कारवां चलता रहा। मैंने अपने दुख, अपने हादसे, और अपने प्यार में मिले अनेकों लम्हों को अपनी कलम में डुबो

लिया। दुखों का भंडार जमा हुआ तो आंसुओं में भीगे शब्द अपने आप ही कागज के बदन पर उतरने लगे।

इसी बीच मां ने लड़की देखी। बहू के रूप में पसंद आई तो चाहा कि किसी भी प्रकार उनके घर में आ जाये। तब इस प्रकार मां के वचन और उनके सम्मान में मैंने विवाह की हां कर दी तो पत्नी के रूप में 'आशा' मेरी निराशा में जीवन की ज्योति बनकर मेरी मृत हुई लालसाओं को फिर से दस्तक देने लगी। सोचा था कि विवाह के बाद बगैर अपने से शिकवे किये हुये जीवन व्यतीत हो जाये, इतना ही काफी होगा, मगर मैं आहत् सा होने लगा तब, जब कि मेरी पत्नी आशा ने पहली बार मुझको ' बाबू' कह कर संबोधित किया। समझ में नहीं आया कि मैं क्या करूं। रोमी का मैं 'बाबू' था, अपनी पत्नी का भी मैं 'बाबू' हूं। वह भूरी, नीली आंखों वाली थी, आशा भी वही रूप और वही भूरी आंखें लेकर मेरे जीवन में प्रविष्ट हुई है। सोचने लगा कि ये कैसा न्याय और कैसा समन्वय है, कि जिसको मैंने अनजाने में खो दिया था, वही शायद दूसरे रूप में मेरे पास सदा के लिये आ चुकी है। परमेश्वर इंसान से इसकदर प्यार करता है कि वह अपने इसी प्रेम के वशीभूत उसको जीने के नये नये आयाम देता रहता है।